॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ अथर्ववेद संहिता ॥

॥ अथर्ववेद ॥

॥ अथ त्रयोदश काण्डम् ॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन
॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १- अध्यात्म-प्रकरण सूक्त..... 4
सूक्त २ – अध्यात्म सूक्त 28
सूक्त ३ - अध्यात्म सूक्त..... 46
सूक्त ४ – अध्यात्म सूक्त 62

॥अथर्ववेद – त्रयोदश काण्डम्॥

सूक्त १- अध्यात्म-प्रकरण सूक्त

सूर्य देव, अग्नि तथा वाचस्पति की स्तुति

उदेहि वाजिन् यो अप्स्वन्तरिदं राष्ट्रं प्र विश सूनृतावत्।
यो रोहितो विश्वमिदं जजान स त्वा राष्ट्राय सुभृतं बिभर्तु ॥१३,१.१॥

हे गतिमान् सूर्यदेव ! अप् (तेजस्वी धाराओं) के बीच से उदित होकर, आप प्रिय सत्यनिष्ठा से युक्त राष्ट्र (ज्योतिरूप) में प्रविष्ट हों । हे राष्ट्राधिपते ! जिस (देव) ने इस (विश्व) को प्रकट किया है, वह आपको राष्ट्र के उत्तमरीति से भरण-पोषण में भी सक्षम बनाए ॥१३,१.१॥

उद्वाज आ गन् यो अप्स्वन्तर्विश आ रोह त्वद्योनयो याः ।
सोमं दधानोऽप ओषधीर्गाश्चतुष्पदो द्विपद आ वेशयेह ॥१३,१.२॥

हे सूर्यदेव ! आप ऊपर उठे । अप् धाराओं में निवास करने वाली प्रजा और अन्न में आप उच्च स्थान प्राप्त करें । सोम आदि वनस्पतियों को पुष्ट करते हुए जल, ओषधियों,

द्विपादों (मनुष्यों), चतुष्पादों (गौआदि पशुओं) को अपने राष्ट्र में प्रतिष्ठित कराएँ ॥१३,१.२॥

यूयमुग्रा मरुतः पृश्निमातर इन्द्रेण युजा प्र मृणीत शत्रून् ।
आ वो रोहितः शृणवत्सुदानवस्त्विषप्तासो मरुतः स्वादुसंमुदः ॥१३,१.३॥

हे मरुद्गण ! आप महान् पराक्रमी और पृथ्वी के प्रति मातृवत् व्यवहार करने वाले हैं । आप इन्द्रदेव के सहयोग से दुष्ट रिपुओं का संहार करें । है श्रेष्ठ दानी मरुद्गणो ! आप स्वादिष्ट पदार्थों से प्रसन्न होते हैं । सूर्यदेव आपकी बात को सुनें ॥१३,१.३॥

रुहो रुरोह रोहित आ रुरोह गर्भो जनीनां जनुषामुपस्थम् ।
ताभिः संरब्धमन्वविन्दन् षडुर्वीर्गातुं प्रपश्यन्न् इह राष्ट्रमाहाः ॥१३,१.४॥

सूर्यदेव उदित होकर ऊपर चढ़ रहे हैं, वे उत्पादन क्षमता से युक्त (प्रकृति) माता के अंक में गर्भरूप होकर बैठ गये हैं । छः दिशाओं ने उन (सूर्यदेव) के द्वारा बढ़ाये गर्भ को धारण किया है। वे उन्नति के मार्ग को जानते हुए राष्ट्र को भी उन्नत करते हैं ॥१३,१.४॥

आ ते राष्ट्रमिह रोहितोऽहार्षीद्व्यास्थन् मृधो अभयं ते अभूत्।
तस्मै ते द्यावापृथिवी रेवतीभिः कामं दुहातामिह शक्करीभिः
॥१३,१.५॥

आपके राष्ट्र में सूर्यदेव आ गये हैं। उन्होंने अनिष्टकारी शत्रुओं (रोगों) को दूर भगाकर आपको निर्भयता प्रदान की है। ये द्युलोक और भूलोक आपके लिए यथेच्छ मात्रा में सम्पत्तियों और शक्तियों को दुहने वाले हों ॥१३,१.५॥

रोहितो द्यावापृथिवी जजान तत्र तन्तुं परमेष्ठी ततान ।
तत्र शिश्रियेऽज एकपादोऽदंहद्द्यावापृथिवी बलेन
॥१३,१.६॥

सूर्यदेव से द्युलोक और भूलोक का प्राकट्य हुआ है। वहाँ प्रजापति ने सूत्ररूप आत्मतत्त्व को विस्तारित किया है। वहीं पर एक पाद अज (आत्मा) ने अवलम्बन लिया है और अपनी सामर्थ्य से द्युलोक और पृथ्वी दोनोंको सुदृढ़ता प्रदान की ॥१३,१.६॥

रोहितो द्यावापृथिवी अदंहत्तेन स्व स्तभितं तेन नाकः ।
तेनान्तरिक्षं विमिता रजांसि तेन देवा अमृतमन्वविन्दन्
॥१३,१.७॥

सूर्यदेव ने पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक को सुदृढ़ता प्रदान की। उनके द्वारा सुखों से परिपूर्ण स्वर्गलोक को स्थिर किया गया। उनके द्वारा ही दैवी शक्तियों ने अमरता को उपलब्ध किया ॥१३,१.७॥

वि रोहितो अमृशद्विश्वरूपं समाकुर्वाणः प्ररुहो रुहश्च ।
दिवं रूढ्वा महता महिम्ना सं ते राष्ट्रमनक्तु पयसा घृतेन ॥१३,१.८॥

रोहितदेव(सूर्यदेव) ने ही सभी रुह (ऊपरी) और प्ररुह(निम्नस्थ) दिशाओं को भलीप्रकार प्रकट करते हुए सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों के शरीरों का स्पर्श किया है । वे अपनी महान् महिमा से द्युलोक पर चढ़कर आपके राष्ट्र को दूध और घृतादि से परिपूर्ण रखें ॥१३,१.८॥

यास्ते रुहः प्ररुहो यास्त आरुहो याभिरापृणासि दिवमन्तरिक्षम् ।
तासां ब्रह्मणा पयसा ववृधानो विशि राष्ट्रे जागृहि रोहितस्य ॥१३,१.९॥

जो आपकी ओर अग्रसर होने वालीं, पीछे की ओर लौटने वाली तथा ऊँचाई की ओर बढ़ने वाली लतारूष प्रजा है, जिससे आप स्वर्ग और अन्तरिक्ष को पोषण देते हैं। उनके

शक्तिवर्द्धक घृत, दुग्ध आदि से हृष्ट-पुष्ट होते हुए इस राष्ट्र और प्रजा में आप सतत जाग्रत् रहें ॥१३,१.९॥

यस्ते विशस्तपसः संबभूवुर्वत्सं गायत्रीमनु ता इहागुः ।
तास्त्वा विशन्तु मनसा शिवेन संमाता वत्सो अभ्येतु रोहितः ॥१३,१.१०॥

सूर्य की तपः शक्ति से सभी प्रजाओं का प्राकट्य हुआ है । वे प्रजाएँ गायत्री (विद्या या शक्ति) के अनुकूल होकर प्रगति करती हैं। वे सभी श्रेष्ठ कल्याणकारी, संकल्पशक्ति से युक्त मन से आप में प्रवेश करें। अपनी माता सहित सूर्यदेव उन्नति को प्राप्त हों ॥१३,१.१०॥

ऊर्ध्वो रोहितो अधि नाके अस्थाद्विश्वा रूपाणि जनयन् युवा कविः ।
तिग्मेनाग्निर्ज्योतिषा वि भाति तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ॥१३,१.११॥

तरुण, क्रान्तदर्शी, विश्व के रूपों को प्रकट करते हुए सूर्यदेव ऊर्ध्वगामी होकर द्युलोक में विराजमान होते हैं। अग्निदेव भी उनकी प्रखर तेजस्विता से प्रकाशवान होते हैं। वे तीसरे लोक (द्युलोकों में रहते हुए भी मनुष्यों के प्रिय कार्यों को करते हैं ॥१३,१.११॥

सहस्रशृङ्गो वृषभो जातवेदा घृताहुतः सोमपृष्ठः सुवीरः ।
मा मा हासीन् नाथितो नेत्त्वा जहानि गोपोषं च मे वीरपोषं च धेहि ॥१३,१.१२॥

(ज्वालारूपी) हजारों श्रृंगों से युक्त, अभीष्टवर्षक, घृताहुतियों द्वारा आहुत, सोम को पृष्ठभाग पर धारण करने वाले, श्रेष्ठ वीर सन्तानों को प्रदान करने वाले, सर्वज्ञ अग्निदेव कभी हमारा परित्याग न करें । हम भी कभी आपका आश्रय नछोडें । हे अग्ने ! आप हमें गाय आदि पशुओं के संरक्षण और वीर सन्तति के पालन में समर्थ बनाएँ ॥१३,१.१२॥

रोहितो यज्ञस्य जनिता मुखं च रोहिताय वाचा श्रोत्रेण मनसा जुहोमि ।
रोहितं देवा यन्ति सुमनस्यमानाः स मा रोहैः सामित्यै रोहयतु ॥१३,१.१३॥

सूर्यदेव यज्ञ के उत्पादनकर्ता और मुखरूप हैं । हम वाणी, कान और मन तीनों के सहयोग से सूर्य के लिए आहुति प्रदान करते हैं। सभी देवगण हार्दिक प्रसन्नता के साथ सूर्य को प्राप्त करते हैं। वे हमें सभा-समितियों द्वारा मानवीय प्रगति के शिखर पर चढ़ाएँ ॥१३,१.१३॥

रोहितो यज्ञं व्यदधाद्विश्वकर्मणे तस्मात्तेजांस्युप मेमान्यागुः ।
वोचेयं ते नाभिं भुवनस्याधि मज्मनि ॥१३,१.१४॥

सूर्यदेव ने सम्पूर्ण विश्व के सत्कर्मों के लिए यज्ञीय विज्ञान का पोषण किया। उसी यज्ञीय भावना से ये सभी तेजस्वी गुण हमारे समीप आ रहे हैं । इस सम्पूर्ण विश्व के मध्य, महत्त्व की दृष्टि से यही आप (सूर्यदेव) का प्रमुख भाग है, ऐसा हमारा कथन है ॥१३,१.१४॥

आ त्वा रुरोह बृहत्युत पङ्क्तिरा ककुब्वर्चसा जातवेदः ।
आ त्वा रुरोहोष्णिहाक्षरो वषट्कार आ त्वा रुरोह रोहितो रेतसा सह ॥१३,१.१५॥

हे सर्वज्ञ (जातवेदा) अग्निदेव ! बृहती, पंक्ति, ककुप् तथा उष्णिक् आदि सभी छन्द अपनी तेजस्विता सहित आप में प्रविष्ट हुए हैं। वषट्कार भी आपमें प्रविष्ट हुआ है। सूर्यदेव भी अपने तेज के साथ आपमें ही प्रविष्ट होते हैं ॥१३,१.१५॥

अयं वस्ते गर्भं पृथिव्या दिवं वस्तेऽयमन्तरिक्षम् ।
अयं ब्रध्नस्य विष्टपि स्वर्लोकान् व्यानशे ॥१३,१.१६॥

ये सूर्यदेव पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक के भीतर विद्यमान हैं । ये (अग्नि) सम्पूर्ण विश्व के प्रकाशक (सूर्य) के शीर्षस्थल स्वर्गलोक में संव्याप्त होते हैं ॥१३,१.१६॥

वाचस्पते पृथिवी नः स्योना स्योना योनिस्तल्पा नः सुशेवा ।
इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन् पर्यग्निरायुषा वर्चसा दधातु ॥१३,१.१७॥

हे वाचस्पते (वाणी के अधिपति) ! हमारे लिए भूमि, योनि गृह, शय्या आदि सभी पदार्थ सुखदायक हों। जीवन तत्त्व प्राण हमारे साथ मैत्री भावना करते हुए इसी लोक में दीर्घकाल तक रहें । हे परमात्मन् ! ये अग्निदेव हमें दीर्घायु और तेजस्विता के साथ उपलब्ध हों ॥१३,१.१७॥

वाचस्पत ऋतवः पञ्च ये नौ वैश्वकर्मणाः परि ये संबभूवुः ।
इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन् परि रोहित आयुषा वर्चसा दधातु ॥१३,१.१८॥

हे वाचस्पतिदेव ! जो हमारे सम्पूर्ण कर्मों को साधने वाली पाँच ऋतुएँ उत्पन्न हुई हैं, हमारे प्राण उनमें सहयोग भावना रखते हुए यहीं स्थित रहें । हे प्रजापते ! ऐसे आपको सूर्यदेव आयु और तेज के साथ धारण करें ॥१३,१.१८॥

वाचस्पते सौमनसं मनश्च गोष्ठे नो गा जनय योनिषु प्रजाः ।
इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन् पर्यहमायुषा
वर्चसा दधातु ॥१३,१.१९॥

हे वाचस्पति देव ! हम सभी के मन शुभ संकल्पों से युक्त हों, आप हमारी गोशाला में प्रचुर गौओं एवं घर में वीर संतानों को पैदा करें । प्राण हमारे साथ मैत्री भावना रखते हुए इसी लोक में रहें । हे प्रजापते ! ऐसे आपको हम दीर्घायु और तेजस्वित्ता के साथ धारण करते हैं ॥१३,१.१९॥

परि त्वा धात्सविता देवो अग्निर्वर्चसा मित्रावरुणावभि त्वा ।
सर्वा अरातीरवक्रामन्न् एहीदं राष्ट्रमकरः
सुनृतावत्॥१३,१.२०॥

हे राष्ट्राधिपते ! सर्वप्रेरक सवितादेव आपको चारों ओर से परिपुष्ट करें । अग्नि, मित्र तथा वरुणदेव आपको चारों ओर से संरक्षित करें। आप सभी राष्ट्रद्रोही शत्रुओं पर चढ़ाई करते हुए आगे बढ़ें तथा इस राष्ट्र को प्रियऔर सत्यवाणी से युक्त करें ॥१३,१.२०॥

यं त्वा पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहित ।
शुभा यासि रिणन्न् अपः ॥१३,१.२१॥

हे सूर्यदेव ! आपको विविध रंगवाली घोड़ियाँ (किरणें) रथ में धारण करती हैं । आप पानी को गतिमान् करते हुए प्रकाश के साथ श्रेष्ठ रीति से चलते हैं ॥१३,१.२१॥

अनुव्रता रोहिणी रोहितस्य सूरिः सुवर्णा बृहती सुवर्चाः ।
तया वाजान् विश्वरूपां जयेम तया विश्वाः पृतना अभि ष्याम
॥१३,१.२२॥

सबके उत्पादनकर्ता रोहित (सूर्य) की आज्ञानुसार चलने वाली उत्पत्ति शक्ति (प्रकृति) सूक्ष्म ज्ञानयुक्त और उत्तम वर्ण वाली, प्रचुर अन्नयुक्त (तेजस्विनी) रोहिणी है । उस (रोहिणी) के द्वारा हम सभी अन्न या बल पर विजय प्राप्त करें । उससे ही हम सभी सेनाओं (बाधाओं) को वश में करें ॥१३,१.२२॥

इदं सदो रोहिणी रोहितस्यासौ पन्थाः पृषती येन याति ।
तां गन्धर्वाः कश्यपा उन् नयन्ति तां रक्षन्ति कवयोऽप्रमादम्
॥१३,१.२३॥

सूर्य ही इस विलक्षण शक्ति (रोहिणी) का स्रोत है। यही वह मार्ग है, जिससे उसकी विविध वर्गों से युक्त किरणों की शक्ति गमन करती है । गन्धर्व और कश्यप उसे उन्नत

करते हैं । ज्ञानवान् लोग विशिष्ट कौशल के साथ उसे संरक्षण देते हैं ॥१३,१.२३॥

सूर्यस्याश्वा हरयः केतुमन्तः सदा वहन्त्यमृताः सुखं रथम् ।
घृतपावा रोहितो भ्राजमानो दिवं देवः पृषतीमा विवेश
॥१३,१.२४॥

प्रकाशमान, गतिशील और अमर अश्व (किरणे) सूर्य के रथ को चलाते हैं। इन पुष्टिप्रद किरणों से युक्त तेजस्वी सूर्यदेव विविध वर्णयुक्त प्रभा के साथ घुलोक में प्रविष्ट होते हैं ॥१३,१.२४॥

यो रोहितो वृषभस्तिग्मशृङ्गः पर्यग्निं परि सूर्यं बभूव ।
यो विष्टभ्नाति पृथिवीं दिवं च तस्माद्देवा अधि सृष्टीः सृजन्ते
॥१३,१.२५॥

जो रोहितदेव तेजस्वी किरणों से युक्त अभीष्टवर्धक हैं, वे अग्नि और सूर्य के चारों ओर स्थित हैं । जो पृथ्वी और द्युलोक को स्थिरता प्रदान करते हैं, उनसे ही देवों ने सृष्टि की उत्पत्ति की है ॥१३,१.२५॥

रोहितो दिवमारुहन् महतः पर्यर्णवात्।
सर्वो रुरोह रोहितो रुहः ॥१३,१.२६॥

सूर्यदेव विशालसागर से द्युलोक के ऊपर चढ़ते हैं ।ये ऊपर उठने वाली वस्तुओं पर आरोहण करते हैं॥१३,१.२६॥

वि मिमीष्व पयस्वतीं घृताचीं देवानां धेनुरनपस्पृगेषा ।
इन्द्रः सोमं पिबतु क्षेमो अस्त्वग्निः प्र स्तौतु वि मृधो नुदस्व
॥१३,१.२७॥

उत्तम दूध और घृत देने वाली देवों की गौओं का मान (पालन) करें । देवों की गौएँ हलचल नहीं करतीं । इन्द्रदेव सोमरस का पान करें, अग्निदेव कल्याण करें, (देवों की स्तुति करें और शत्रुओं को खदेड़ दें ॥१३,१.२७॥

समिद्धो अग्निः समिधानो घृतवृद्धो घृताहुतः ।
अभीषाट्विश्वाषाडग्निः सपत्नान् हन्तु ये मम ॥१३,१.२८॥

प्रज्वलित हुए अग्निदेव घृताहुतियों से भली प्रकार प्रवृद्ध हुए हैं। वे सभी ओर से शत्रुओं को दूर करके विजय प्राप्त करने वाले अग्निदेव हमारे सभी शत्रुओं को विनष्ट करें ॥१३,१.२८॥

हन्त्वेनान् प्र दहत्वरिर्यो नः पृतन्यति ।

क्रव्यादाग्निना वयं सपत्नान् प्र दहामसि ॥१३,१.२९॥

इन सभी वैरियों को अग्निदेव भस्म कर डालें । जो शत्रु सैन्यशक्ति के साथ हमारे संहार के आकांक्षी हैं, क्रव्याद् (मांसभक्षको अग्नि द्वारा हम उन शत्रुओं को भस्म करते हैं ॥१३,१.२९॥

अवाचीनान् अव जहीन्द्र वज्रेण बाहुमान् ।
अधा सपत्नान् मामकान् अग्नेस्तेजोभिरादिषि ॥१३,१.३०॥

हे बाहुबल सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप वज्र से हमारे शत्रुओं को नीचे झुकाकर (पराभूत करके) विनष्ट करें । हे अग्निदेव ! आप अपनी तेजस्वी लपटों से हमारे शत्रुओं को भस्मीभूत करें ॥१३,१.३०॥

अग्ने सपत्नान् अधरान् पादयास्मद्व्यथया सजातमुत्पिपानं बृहस्पते ।
इन्द्राग्नी मित्रावरुणावधरे पद्यन्तामप्रतिमन्यूयमानाः ॥१३,१.३१॥

है अग्निदेव ! आप हमारे समक्ष शत्रुओं को पददलित करें, ऊपर को उठने वाले समान जातीय शत्रु को पीड़ित करें ।

हे इन्द्राग्नि, मित्रावरुण देवो ! जो शत्रु हमारे प्रतिकूल होकर क्रोध करें, वे पददलित हों ॥१३,१.३१॥

उद्यंस्त्वं देव सूर्य सपत्नान् अव मे जहि ।
अवैनान् अश्मना जहि ते यन्त्वधमं तमः ॥१३,१.३२॥

हे सूर्यदेव ! उदित होते हुए आप हमारे शत्रुओं (हमारे विकास में अवरोधक तत्त्वों) का संहार करें । इन्हें अपनी विनाशकारी शक्ति से विनष्ट करके, मृत्यु के घने अंधकार में फेंक दें ॥१३,१.३२॥

वत्सो विराजो वृषभो मतीनामा रुरोह शुक्रपृष्ठोऽन्तरिक्षम् ।
घृतेनार्कमभ्यर्चन्ति वत्सं ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्ति ॥१३,१.३३॥

विराट् वत्स (बाल सूर्य) सद्बुद्धि के संवर्द्धक, सामर्थ्यशाली पृष्ठभूमि वाले होकर अंतरिक्ष पर चढ़ते हैं। वे स्वयं ब्रह्म के स्वरूप हैं, साधक उन्हें ब्रह्म (मंत्रों-यज्ञों) द्वारा समृद्ध करते हैं ॥१३,१.३३॥

दिवं च रोह पृथिवीं च रोह राष्ट्रं च रोह द्रविणं च रोह ।
प्रजां च रोहामृतं च रोह रोहितेन तन्वं सं स्पृषस्व ॥१३,१.३४॥

हे राष्ट्राध्यक्ष ! आप स्वर्ग, पृथ्वी, राष्ट्र, धन, प्रजा और अमरत्व पर अधिष्ठित रहें । सूर्य प्रकाश से अपने शारीरिक सम्बन्ध को संयुक्त करें ॥१३,१.३४॥

ये देवा राष्ट्रभृतोऽभितो यन्ति सूर्यम् ।
तैष्टे रोहितः सम्विदानो राष्ट्रं दधातु सुमनस्यमानः ॥१३,१.३५॥

राष्ट्र का भरण-पोषण करने वाली जो देवशक्तियाँ सूर्य के चारों ओर घूमती हैं, उनके साथ मतैक्य स्थापित करके रोहितदेव प्रसन्नतापूर्वक आपके राष्ट्र को धारण करें ॥१३,१.३५॥

उत्त्वा यज्ञा ब्रह्मपूता वहन्त्यध्वगतो हरयस्त्वा वहन्ति ।
तिरः समुद्रमति रोचसेऽर्णवम् ॥१३,१.३६॥

हे सूर्यदेव ! मन्त्रों द्वारा पुनीत हुए यज्ञकृत्य आपका वहन करते हैं और सुमार्ग से गमन करने वाले अश्व भी आपका वहन करते हैं। आप अपनी किरणों से महासागर को प्रकाशवान् करते हैं ॥१३,१.३६॥

रोहिते द्यावापृथिवी अधि श्रिते वसुजिति गोजिति संधनाजिति ।
सहस्रं यस्य जनिमानि सप्त च वोचेयं ते नाभिं भुवनस्याधि मज्मनि ॥१३,१.३७॥

धन, गौओं और ऐश्वर्य सम्पदा को उपलब्ध कराने वाले सूर्यदेव के अवलम्बन से द्युलोक और पृथ्वी स्थिर हैं, जिनसे सहस्र(हजारों) धाराओं (में प्रकाश) और सात (वर्ण या प्राण) जन्म लेते हैं। ऐसे आप ही संसार की महानता के केन्द्र हैं, ऐसी हमारी मान्यता है ॥१३,१.३७॥

यशा यासि प्रदिशो दिशश्च यशाः पशूनामुत चर्षणीनाम् ।
यशाः पृथिव्या अदित्या उपस्थेऽहं भूयासं सवितेव चारुः ॥१३,१.३८॥

आप दिशाओं और उपदिशाओं में यशस्वी होकर गमन करते हैं, पशु और मनुष्यों में यशस्वी होकर जाते हैं। हम भी अखण्डनीया भूमि की गोद में यशस्वी होकर सवितादेव के समान सुन्दर बने ॥१३,१.३८॥

अमुत्र सन्न् इह वेत्थेतः संस्तानि पश्यसि ।
इतः पश्यन्ति रोचनं दिवि सूर्यं विपश्चितम् ॥१३,१.३९॥

आप वहाँ (द्युलोक में) वास करते हुए भी यहाँ के तथा इस लोक में रहते हुए वहाँ के सभी रहस्यों का दर्शन करते हैं। प्राणी भी यहाँ से द्युलोक में प्रकाशमान, ज्ञानसम्पन्न सूर्यदेव का दर्शन करते हैं ॥१३,१.३९॥

देवो देवान् मर्चयस्यन्तश्चरस्यर्णवे ।
समानमग्निमिन्धते तं विदुः कवयः परे ॥१३,१.४०॥

आप स्वयं देव (प्रकाशक) होते हुए भी देवशक्तियों को क्रियाशील करते हैं और अन्तरिक्षलोक में विचरण करते हैं । जो समान तेजस्वी अग्नि को प्रदीप्त करते हैं, वे क्रान्तद्रशी विद्वान् इसके सम्बंध में जानते हैं ॥१३,१.४०॥

अवः परेण पर एनावरेण पदा वत्सं बिब्रती गौरुदस्थात्।
सा कद्रीची कं स्विदर्धं परागात्क्व स्वित्सूते नहि यूथे अस्मिन् ॥१३,१.४१॥

गौएँ (पोषक किरणें) द्युलोक से नीचे की ओर तथा इस (पृथ्वी) से ऊपर की ओर (सतत) गतिमान् हैं। ये बछड़े (जीवनतत्त्व) को धारण किये हुए किस लक्ष्य की ओर जाते हैं ? ये गौएँ किस आधे भाग से परे निकल कर जन्म देती हैं ? यहाँ समूह के मध्य तो नहीं देतीं ॥१३,१.४१॥

एकपदी द्विपदी सा चतुष्पद्यष्टापदी नवपदी बभूवुषी ।
सहस्राक्षरा भुवनस्य पङ्क्तिस्तस्याः समुद्रा अधि वि क्षरन्ति
॥१३,१.४२॥

वह सूर्य रश्मि एकपदी, द्विपदी, चतुष्पदी, अष्टपदी और नवपदी हो जाती है। वह जगत् की पंक्तिरूप है, जो सघन जलवाली होकर मेघों को क्षरित करती है ॥१३,१.४२॥

आरोहन् द्याममृतः प्राव मे वचः ।
उत्त्वा यज्ञा ब्रह्मपूता वहन्त्यध्वगतो हरयस्त्वा वहन्ति
॥१३,१.४३॥

अमृतरूप हे सूर्यदेव ! आप द्युलोक पर चढ़ते हुए हमारी वाणी का संरक्षण करें । मन्त्रों से पुनीत यज्ञ आपका वहन करते हैं तथा मार्गस्थ (अश्व) किरणें सम्पूर्ण विश्व में आपको विस्तारित करती हैं ॥१३,१.४३॥

वेद तत्ते अमर्त्य यत्त आक्रमणं दिवि ।
यत्ते सधस्थं परमे व्योमन् ॥१३,१.४४॥

हे अविनाशीदेव ! आपके द्युलोक में विचरण स्थान और परम व्योम में जो निवास के स्थान हैं, उन्हें हम अच्छी तरह जानते हैं ॥१३,१.४४॥

सूर्यो द्यां सूर्यः पृठिवीं सूर्य आपोऽति पश्यति ।
सूर्यो भूतस्यैकं चक्षुरा रुरोह दिवं महीम् ॥१३,१.४५॥

सूर्यदेव दिव्यलोक, अन्तरिक्ष, पृथ्वी और जल आदि को विशेषरूप से देखते हैं। सूर्य ही सम्पूर्ण विश्व (प्राणिमात्र) के अद्वितीय नेत्र हैं । वे विशाल धुलोक में आरोहण करते हैं ॥१३,१.४५॥

उर्वीरासन् परिधयो वेदिर्भूमिरकल्पत ।
तत्रैतावग्नी आधत्त हिमं घ्रंसं च रोहितः ॥१३,१.४६॥

(सृष्टिरूपी यज्ञ कर्म के समय) पृथ्वी की वेदिका बनाई गई । इसकी उर्वियाँ परिधि बन गईं । तब सूर्यदेव ने हिम और दिन (शीतकाल और उष्णकाल) ये दो अग्नियाँ इस यज्ञ में प्रयुक्त कीं ॥१३,१.४६॥

हिमं घ्रंसं चाधाय यूपान् कृत्वा पर्वतान् ।
वर्षाज्यावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ॥१३,१.४७॥

सूर्य के उत्तम सुखों को पाने के अभिलाषी, साधक हिम और दिन (शीत और उष्ण ऋतुओं) का आधान करके तथा

पहाड़ों को स्तम्भ (यूप) बनाकर वर्षारूप घृत से अग्नि की अर्चना करते थे ॥१३,१.४७॥

स्वर्विदो रोहितस्य ब्रह्मणाग्निः समिध्यते ।
तस्माद्ग्रंसस्तस्माद्धिमस्तस्माद्यज्ञोऽजायत ॥१३,१.४८॥

आत्मज्ञान की प्राप्ति में सहायक सूर्यदेव के मन्त्र से यज्ञाग्नि को प्रज्वलित किया जाता है। उससे हिम(शीत) दिवस, उष्णता और यज्ञ का प्राकट्य हुआ हैं ॥१३,१.४८॥

ब्रह्मणाग्नी वावृधानौ ब्रह्मवृद्धौ ब्रह्माहुतौ ।
ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ॥१३,१.४९॥

ब्रह्म (ज्ञान) से बढ़ने वाले, ब्रह्म (मन्त्रों) से प्रदीप्त होने वाले, ब्रह्म (यज्ञ में आहुति पाने वाले, ये दो ब्रह्म और अग्नि हैं। स्वर्ग के जानकार इन सूर्यदेव के तेज से ये दोनों ब्रह्म और अग्नि प्रदीप्त हैं ॥१३,१.४९॥

सत्ये अन्यः समाहितोऽप्स्वन्यः समिध्यते ।
ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ॥१३,१.५०॥

एक अग्नि सत्य में प्रतिष्ठित है और दूसरी अप् प्रवाहों में प्रदीप्त होती है । स्वर्ग के ज्ञाता सूर्यदेव के तेज से ये दोनों अग्नियाँ प्रदीप्त होती हैं ॥१३,१.५०॥

यं वातः परिशुम्भति यं वेन्द्रो ब्रह्मणस्पतिः ।
ब्रह्मेद्धावग्नी ईजाते रोहितस्य स्वर्विदः ॥१३,१.५१॥

जिन्हें वायु, इन्द्र और ब्रह्मणस्पति आदि देवगण सुशोभित करने के अभिलाषी हैं, ऐसे सूर्यदेव के तेज से ये दोनों अग्नियाँ प्रज्वलित होती हैं ॥१३,१.५१॥

वेदिं भूमिं कल्पयित्वा दिवं कृत्वा दक्षिणाम् ।
घ्रंसं तदग्निं कृत्वा चकार विश्वमात्मन्वद्वर्षेणाज्येन रोहितः ॥१३,१.५२॥

भूमि को वेदिका बनाकर, द्युलोक को दक्षिणारूप देकर और दिवस को ही अग्नि मानकर सूर्यदेव ने वृष्टिरूप घी से सम्पूर्ण विश्व को आत्मवान् (अस्तित्ववान्) बना दिया है ॥१३,१.५२॥

वर्षमाजं घ्रंसो अग्निर्वेदिर्भूमिरकल्पत ।
तत्रैतान् पर्वतान् अग्निर्गीर्भिरूर्ध्वामकल्पयत्॥१३,१.५३॥

वर्षा ऋतु को घृत, दिन को अग्नि और भूमि को वेदिकारूप बनाया गया। वहाँ स्तुति-वचनों से सम्पन्न अग्नि द्वारा, इन पर्वत शिखरों को ऊँचा (उन्नत किया गया ॥१३,१.५३॥

गीर्भिरूर्ध्वान् कल्पयित्वा रोहितो भूमिमब्रवीत्।
त्वयीदं सर्वं जायतां यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥१३,१.५४॥

स्तुति वचनों से पर्वतों को उन्नत बनाकर सूर्यदेव ने भूमि से कहा कि जो भूत और भविष्यकाल में सम्भावित है, वह सभी आपमें प्रकट हो ॥१३,१.५४॥

स यज्ञः प्रथमो भूतो भव्यो अजायत ।
तस्माद्ध जज्ञ इदं सर्वं यत्किं चेदं विरोचते रोहितेन ऋषिणाभृतम् ॥१३,१.५५॥

यह यज्ञ सर्वप्रथम भूत और भविष्यत् के रूप में उत्पन्न हुआ, उससे वह सब कुछ प्रकट हुआ, जो विराजित (प्रकाशमान) है, इसे द्रष्टा ऋषि रोहित (सूर्य) ने ही परिपुष्ट किया है ॥१३,१.५५॥

यश्च गां पदा स्फुरति प्रत्यङ्सूर्यं च मेहति ।
तस्य वृश्चामि ते मूलं न छायां करवोऽपरम् ॥१३,१.५६॥

जो पैर से गाय का स्पर्श करता है और सूर्य की ओर मुख करके मूत्रोत्सर्ग करता है, मैं उसे समूल विनष्ट करता हूँ। मैं उसके ऊपर छाया (कृपा) भी नहीं करता ॥१३,१.५६॥

यो माभिछायमत्येषि मां चाग्निं चान्तरा ।
तस्य वृश्चामि ते मूलं न छायां करवोऽपरम् ॥१३,१.५७॥

जो मुझे छाया में रखने (ढकने) का प्रयास करेगा, मेरा अतिक्रमण करेगा और जो मेरे (सूर्य के) और अग्नि के बीच में अवरोध बनेगा, उसे मैं समूल विनष्ट कर दूंगा ॥१३,१.५७॥

यो अद्य देव सूर्य त्वां च मां चान्तरायति ।
दुष्वप्न्यं तस्मिं छमलं दुरितानि च मृज्महे ॥१३,१.५८॥

हे सूर्यदेव ! जो हमारे (अग्नि के) और आपके मध्य इस समय विघ्न पैदा करने के इच्छुक हैं, हम उनमें बुरे स्वप्न, दुष्ट कल्पनाओं और पापकर्मों को प्रविष्ट करते हैं ॥१३,१.५८॥

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः ।
मान्त स्थुर्नो अरातयः ॥१३,१.५९॥

‘ हे इन्द्रदेव ! हम अपने श्रेष्ठ मार्ग का कभी परित्याग न करें। हम सोमयाग से कभी दूर न हों । शत्रु हमारे देश की सीमा में न रहें ॥१३,१.५९॥

यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वाततः ।
तमाहुतमशीमहि ॥१३,१.६०॥

जो यज्ञ सभी देवों में देवत्व के लक्षणरूप में विस्तारित हुआ है, उस यज्ञ का हम सेवन करें ॥१३,१.६०॥

॥अथर्ववेद – त्रयोदश काण्डम्॥

सूक्त २ – अध्यात्म सूक्त

सर्य देव की स्तुति तथा रोहित देव का वर्णन और प्रशंसा

उदस्य केतवो दिवि शुक्रा भ्राजन्त ईरते ।
आदित्यस्य नृचक्षसो महिव्रतस्य मीढुषः ॥१३,२.१॥

सेचन समर्थ सूर्यदेव महान् व्रतशील और मनुष्यों के निरीक्षक हैं, जिनकी किरणें आकाश में उदित होने पर शुद्ध तेजस्वी प्रकाश से चमकती हैं ॥१३,२.१॥

दिशां प्रज्ञानां स्वरयन्तमर्चिषा सुपक्षमाशुं पतयन्तमर्णवे ।
स्तवाम सूर्यं भुवनस्य गोपां यो रश्मिभिर्दिश आभाति सर्वाः ॥१३,२.२॥

अपनी दीप्ति से दिशाओं को प्रकाशित करने वाले, सागर में श्रेष्ठ रश्मियों के साथ विचरने वाले तथा अपनी किरणों से दसों दिशाओं को प्रकाशित करने वाले उन त्रिभुवन के संरक्षक सूर्यदेव की हम स्तुति करते हैं ॥१३,२.२॥

यत्प्राङ्प्रत्यङ्स्वधया यासि शीभं नानारूपे अहनी कर्षि मायया ।
तदादित्य महि तत्ते महि श्रवो यदेको विश्वं परि भूम जायसे ॥१३,२.३॥

है आदित्यदेव ! आप पूर्व और पश्चिम दिशा में अपनी धारकक्षमता के साथ शीघ्रतापूर्वक गमन करते हैं, अपनी विलक्षण शक्ति से विभिन्नरूप वाले रात्रि और दिन बनाते हैं। आप संसार में सबसे महान् और अद्वितीय प्रभाव से युक्त हैं ॥१३,२.३॥

विपश्चितं तरणिं भ्राजमानं वहन्ति यं हरितः सप्त बह्वीः ।
स्रुताद्यमल्लिर्दिवमुन्निनाय तं त्वा पश्यन्ति परियान्तमाजिम् ॥१३,२.४॥

सात तेजस्वी किरणें भवसागर से पार करने वाले जिन ज्ञानी सूर्यदेव को वहन करती हैं, जिन्हें अत्रि (त्रिगुणातीत) प्रवाहों से उठाकर घुलोक पहुँचाया गया है, ऐसे आपको हम चारों ओर घूमते हुए देखते हैं ॥१३,२.४॥

मा त्वा दभन् परियान्तमाजिं स्वस्ति दुर्गामति याहि शीभम् ।

दिवं च सूर्य पृथिवीं च देवीमहोरात्रे विमिमानो यदेषि ॥१३,२.५॥

हे सूर्यदेव ! आप द्युलोक और पृथ्वी पर दिन और रात्रि की रचना करते हुए विचरण करते हैं, ऐसे आपको शत्रु न दबा पाएँ । आप शीघ्रतापूर्वक सुख के साथ दुर्गम स्थलों को पार करें ॥१३,२.५॥

स्वस्ति ते सूर्य चरसे रथाय येनोभावन्तौ परियासि सद्यः ।
यं ते वहन्ति हरितो वहिष्ठाः शतमश्वा यदि वा सप्त बह्वीः ॥१३,२.६॥

हे सूर्यदेव ! आप जिससे दोनों सीमाओं तक शीघ्र ही पहुँच जाते हैं, उस मंगलकारी रथ का कल्याण हो, जिसे सात किरणे अथवा विचरणशील सौ अश्वरूप किरणें चलाती हैं ॥१३,२.६॥

सुखं सूर्य रथमंशुमन्तं स्योनं सुवह्निमधि तिष्ठ वाजिनम् ।
यं ते वहन्ति हरितो वहिष्ठाः शतमश्वा यदि वा सप्त बह्वीः ॥१३,२.७॥

हे सूर्यदेव ! आप तेजस्वी, सुखदायी सुन्दर अग्नि के समान देदीप्यमान, गतिशील श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ हों। आपके उस

रथ का सात या अनेक हरित अश्व गंतव्य स्थल की ओर वहन करते हैं ॥१३,२.७॥

सप्त सूर्यो हरितो यातवे रथे हिरण्यत्वचसो बृहतीरयुक्त ।
अमोचि शुक्रो रजसः परस्ताद्विधूय देवस्तमो दिवमारुहत्॥१३,२.८॥

स्वर्णिम त्वचा वाले सूर्यदेव व्यापक प्रकाशयुक्त सात किरणरूपी हरित अश्वों के साथ अपने रथ में विराजमान होते हैं । पावन प्रकाश से युक्त सूर्यदेव अन्धकार को दूर हटाकर रजोगुण से परे दिव्यलोक में स्वयं प्रविष्ट हुए ॥१३,२.८॥

उत्केतुना बृहता देव आगन्न् अपावृक्तमोऽभि ज्योतिरश्रैत्।
दिव्यः सुपर्णः स वीरो व्यख्यददितेः पुत्रो भुवनानि विश्वा ॥१३,२.९॥

उदित होने वाले महान् ध्वजा (प्रकाश) के साथ सूर्यदेव आ रहे हैं, वे अन्धकार को दूर भगाकर तेजस्विता का आश्रय ले रहे हैं ।उस दिव्य प्रकाश से युक्त अदिति के वीरपुत्र (सूर्य) ने सम्पूर्ण विश्व को आलोकित किया ॥१३,२.९॥

उद्यन् रश्मीन् आ तनुषे विश्वा रुपाणि पुष्यसि ।

उभा समुद्रौ क्रतुना वि भासि सर्वांल्लोकान् परिभूर्भ्राजमानः ॥१३,२.१०॥

हे सूर्यदेव ! आप उदित होते समय अपनी रश्मियों को फैलाते हैं और सभी पदार्थों के रूप (आकार) को परिपुष्ट करते हैं। आप देदीप्यमान होकर अपने यज्ञीय प्रभाव से दोनों समुद्रों और सम्पूर्ण विश्व को आलोकित करते हैं ॥१३,२.१०॥

पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीडन्तौ परि यातोऽर्णवम् ।
विश्वान्यो भुवना विचष्टे हैरण्यैरन्यं हरितो वहन्ति ॥१३,२.११॥

ये दोनों शिशुरूप सूर्य और चन्द्रमा क्रीड़ा करते हुए अपनी शक्ति से समुद्र तक भ्रमण करते हुए जाते हैं। इनमें एक सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करता है और दूसरे को अश्व अपनी स्वर्णिम किरणों से वहन करते हैं ॥१३,२.११॥

दिवि त्वात्त्रिरधारयत्सूर्या मासाय कर्तवे ।
स एषि सुधृतस्तपन् विश्वा भूतावचाकशत्॥१३,२.१२॥

हे सूर्यदेव ! अत्रि ने आपको मास समूह के निर्माण हेतु द्युलोक में स्थापित किया है। आप तापयुक्त होकर सभी

प्राणियों को प्रकाशित करते हुए स्वयं सुस्थिर होकर चलते हैं ॥१३,२.१२॥

उभावन्तौ समर्षसि वत्सः संमातराविव ।
नन्वेतदितः पुरा ब्रह्म देवा अमी विदुः ॥१३,२.१३॥

जैसे बालक माता-पिता के समीप जाता है, वैसे ही आप दोनों समुद्रों (उदय और अस्त दोनों भागों) को प्राप्त होते हैं। ये देव निश्चित ही यह समझते हैं कि सभी शाश्वत ब्रह्म है ॥१३,२.१३॥

यत्समुद्रमनु श्रितं तत्सिषासति सूर्यः ।
अध्वास्य विततो महान् पूर्वश्चापरश्च यः ॥१३,२.१४॥

जो मार्ग समुद्र के आश्रय से युक्त है, सूर्यदेव उन्हें प्राप्त करने के इच्छुक हैं। इनके पूर्व और पश्चिम के मार्ग महिमामय और विस्तृत हैं ॥१३,२.१४॥

तं समाप्नोति जूतिभिस्ततो नाप चिकित्सति ।
तेनामृतस्य भक्षं देवानां नाव रुन्धते ॥१३,२.१५॥

हे सूर्यदेव ! उस मार्ग को आप शीघ्रगामी अश्वों (किरणों) से पूर्ण करते हैं, आप उससे सतर्क रहते हुए देवों का अमृतसेवन नहीं रोकते ॥१३,२.१५॥

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः ।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥१३,२.१६॥

रश्मियाँ जातवेदा सूर्यदेव को, समस्त विश्व को दृष्टि प्रदान करने के लिए उच्च स्थान में ले जाती हैं ॥१३,२.१६॥

अप त्ये तायवो यथा नक्षत्रा यन्त्यक्तुभिः ।
सूराय विश्वचक्षसे ॥१३,२.१७॥

सबको प्रकाश देने वाले सूर्यदेव के उदित होते ही रात्रि के साथ नक्षत्र (तारागण) वैसे ही छिप जाते हैं, जैसे दिवस का प्रादुर्भाव होते ही चोर छिप जाते हैं ॥१३,२.१७॥

अदृश्रन्न् अस्य केतवो वि रश्मयो जनामनु ।
भ्राजन्तो अग्नयो यथा ॥१३,२.१८॥

सूर्यदेव की रश्मियाँ जीव-जगत् को प्रकाशित करती हुई अग्नि की किरणों के समान दृष्टिगोचर होती हैं ॥१३,२.१८॥

तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य ।
विश्वमा भासि रोचन ॥१३,२.१९॥

हे सूर्यदेव ! आप साधकों का उद्धार करने वाले, सबके द्रष्टा और प्रकाश प्रदाता हैं। सम्पूर्ण विश्व को आप ही प्रकाशित करते हैं ॥१३,२.१९॥

प्रत्यङ्देवानां विशः प्रत्यङ्ङुदेषि मानुषीः ।
प्रत्यङ्विश्वं स्वर्दृशे ॥१३,२.२०॥

हे सूर्यदेव ! आप सभी देवताओं और मनुष्यों के सामने उदित होते हैं, जिससे सभी को आपका दर्शन एवं प्रकाश मिलता है ॥१३,२.२०॥

येना पावक चक्षसा भुरण्यन्तं जनामनु ।
त्वं वरुण पश्यसि ॥१३,२.२१॥

पवित्रता प्रदान करने वाले हे देव ! जिस दृष्टि से आप भरण-पोषण करने वाले लोगों को देखते हैं, उसी से हमें भी देखें ॥१३,२.२१॥

वि द्यामेषि रजस्पृथ्वहर्मिमानो अक्तुभिः ।
पश्यन् जन्मानि सूर्य ॥१३,२.२२॥

हे सूर्यदेव ! आप जीवों पर अनुग्रह करने हेतु दिन और रात्रि की रचना करते हुए अन्तरिक्ष एवं द्युलोक में परिभ्रमण करते हैं ॥१३,२.२२॥

सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य ।
शोचिष्केशं विचक्षणम् ॥१३,२.२३॥

हे सर्वद्रष्टा सूर्यदेव ! तेजस्वी सप्तवर्णी किरणरूपी अश्व रथ में आपको ले जाते हैं ॥१३,२.२३॥

अयुक्त सप्त शुन्ध्युवः सूरो रथस्य नप्त्यः ।
ताभिर्याति स्वयुक्तिभिः ॥१३,२.२४॥

ज्ञानसम्पन्न ऊर्ध्वगामी सूर्यदेव पवित्रता प्रदायक अपने सप्तवर्णी अश्वों (किरणों) से सुशोभित रथ में अपनी युक्तियों से गमन करते हैं ॥१३,२.२४॥

रोहितो दिवमारुहत्तपसा तपस्वी ।
स योनिमैति स उ जायते पुनः स देवानामधिपतिर्बभूव ॥१३,२.२५॥

अपनी तपश्चर्या रूप तेजस् से तेजस्वी सूर्यदेव द्युलोक पर आरोहण करते हैं, वे योनि (मूलस्थान) में पहुँचकर पुनः उत्पन्न होते हैं, वे ही सभी देवों के अधिपति बने ॥१३,२.२५॥

यो विश्वचर्षणिरुत विश्वतोमुखो यो विश्वतस्पाणिरुत विश्वतस्पृथः ।
सं बाहुभ्यां भरति सं पतत्रैर्द्यावापृथिवी जनयन् देव एकः ॥१३,२.२६॥

जो प्राणियों के द्रष्टा, अनेक मुखों से युक्त, चारों और हाथों और भुजाओं से विस्तृत हैं, वे अद्वितीय सूर्य अपनी पतनशील किरणों से द्युलोक और पृथ्वी को उत्पन्न करते हुए अपनी भुजाओं से सबका पोषण करते हैं ॥१३,२.२६॥

एकपाद्द्विपदो भूयो वि चक्रमे द्विपात्त्रिपादमभ्येति पश्चात्।
द्विपाद्ध षट्पदो भूयो वि चक्रमे त एकपदस्तन्वं समासते ॥१३,२.२७॥

एक पाद द्विपादों से अधिक चलता है, फिर द्विपाद त्रिपादों के साथ मिलता है । द्विपाद निश्चय ही षट्पदों से भी अधिक चलता है । वे एक पाद के शरीर का आश्रय ग्रहण करते हैं ॥१३,२.२७॥

अतन्द्रो यास्यन् हरितो यदास्थाद्वे रूपे कृणुते रोचमानः ।
केतुमान् उद्यन्त्सहमानो रजांसि विश्वा आदित्य प्रवतो वि
भासि ॥१३,२.२८॥

आलस्यरहित सूर्यदेव गमन करने के लिए जब अश्वारूढ़ होते हैं, उस समय वे अपने दो स्वरूप निर्मित करते हैं । हे आदित्यदेव ! उदित होते हुए प्रकाशरूप ध्वजा वाले आप सभी लोकों को जीतते हुए (वशीभूत करते हुए प्रकाशित होते हैं ॥१३,२.२८॥

बण्महामसि सूर्य बडादित्य महामसि ।
महांस्ते महतो महिमा त्वमादित्य महामसि ॥१३,२.२९॥

हे सूर्यदेव ! आपकी महिमा महान् है, यहीं सत्य है । हे आदित्यदेव ! आप महान् की महिमामय ख्याति भी महानता युक्त है ॥१३,२.२९॥

रोचसे दिवि रोचसे अन्तरिक्षे पतङ्ग पृथिव्यां रोचसे रोचसे
अप्स्वन्तः ।
उभा समुद्रौ रुच्या व्यापिथ देवो देवासि महिषः
स्वर्जित्॥१३,२.३०॥

हे सूर्यदेव ! आप द्युलोक, अन्तरिक्ष, पृथ्वी और जल के भीतर प्रकाशित होते हैं। आप अपने तेजस् से दोनों समुद्रों को व्याप्त करते हैं । हे देव ! आप स्वर्गलोक के विजेता महासामर्थ्य से सम्पन्न हैं ॥१३,२.३०॥

अर्वाङ्परस्तात्प्रयतो व्यध्व आशुर्विपश्चित्पतयन् पतङ्गः ।
विष्णुर्विचित्तः शवसाधितिष्ठन् प्र केतुना सहते विश्वमेजत्॥१३,२.३१॥

ज्ञानसम्पन्न सूर्यदेव दक्षिणायन की ओर जाते हुए शीघ्रता से मार्ग को पार करते हैं। ये सूर्यदेव विशिष्ट ज्ञानी और व्यापक हैं । वे अपनी सामर्थ्य से अधिष्ठित होते हुए, अपने सम्पूर्ण गतिमान् विश्वको धारण करते हैं ॥१३,२.३१॥

चित्राश्चिकित्वान् महिषः सुपर्ण आरोचयन् रोदसी अन्तरिक्षम् ।
अहोरात्रे परि सूर्यं वसाने प्रास्य विश्वा तिरतो वीर्याणि ॥१३,२.३२॥

अद्भुत ज्ञानसम्पन्न, समर्थ और श्रेष्ठ गतिशील सूर्यदेव अन्तरिक्ष, पृथ्वी और द्युलोक को प्रकाशित करते हैं। वे सूर्यदेव दिन और रात्रि का निर्माण करके सबमें पराक्रमी सामर्थ्य विस्तारित करते हैं ॥१३,२.३२॥

तिग्मो विभ्राजन् तन्वं शिशानोऽरंगमासः प्रवतो रराणः ।
ज्योतिष्मान् पक्षी महिषो वयोधा विश्वा आस्थात्प्रदिशः कल्पमानः ॥१३,२.३३॥

ये तेजस्वी और तीक्ष्ण सूर्यदेव पर्याप्त गतियुक्त, उच्चस्थान पर विराजमान होने वाले पक्षी के समान आकाश में संचरित होते हुए, शक्तिमान् और अन्न के पोषणकर्ता, सभी दिशाओं को तेजस् प्रदान करते हैं ॥१३,२.३३॥

चित्रं देवानां केतुरनीकं ज्योतिष्मान् प्रदिशः सूर्य उद्यन् ।
दिवाकरोऽति द्युम्नैस्तमांसि विश्वातारीद्दुरितानि शुक्रः ॥१३,२.३४॥

देवों के ध्वजरूप, अद्भुत, मूल आधाररूप तेजस्वी सूर्यदेव दिशाओं में उदित होकर अपने तेजस् से सम्पूर्ण अन्धकार को दूर करते हैं और अपने प्रकाश से दिन का निर्माण करते हैं ॥१३,२.३४॥

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्राद्द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥१३,२.३५॥

जंगम, स्थावर जगत् के आत्मा- सूर्यदेव दैवी शक्तियों के अद्भुत तेजस् के समूह के रूप में उदित हो गये हैं। मित्र, वरुण आदि के चक्षुरूप इन सूर्यदेव ने उदित होते ही द्युलोक, पृथ्वीलोक तथा अन्तरिक्ष को अपने तेजस् से भर दिया है ॥१३,२.३५॥

उच्चा पतन्तमरुणं सुपर्णं मध्ये दिवस्तरणिं भ्राजमानम् ।
पश्यम त्वा सवितारं यमाहुरजस्रं ज्योतिर्यदविन्ददत्निः
॥१३,२.३६॥

जिसे ऊँचे स्थान से गमन करने वाले पक्षी के समान अन्तरिक्ष में तेजस्वी होकर तैरने वाला और विशिष्ट ज्योतिस्वरूपं कहा गया है, जिसे आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक दुःखों से रहित स्वीकार करते हैं, उन सविता देव को हम सदैव देखें ॥१३,२.३६॥

दिवस्पृष्ठे धावमानं सुपर्णमदित्याः पुत्रं नाथकाम उप यामि भीतः ।
स नः सूर्य प्र तिर दीर्घमायुर्मा रिषाम सुमतौ ते स्याम
॥१३,२.३७॥

अन्तरिक्षलोक में पक्षी के समान द्रुतगामी अदिति के पुत्र सूर्यदेव की शरण में भयभीत होकर जाते हैं। हे सूर्यदेव !

आप हमें दीर्घायुष्य प्रदान करें, हम कभी हिंसित न हों और आपकी श्रेष्ठ बुद्धि में रमण करें ॥१३,२.३७॥

सहस्राह्ण्यं वियतावस्य पक्षौ हरेर्हंसस्य पततः स्वर्गम् ।
स देवान्त्सर्वान् उरस्युपदद्य संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा ॥१३,२.३८॥

इस स्वर्गलोक को जाते हुए हरणशील हंस जैसे गतिशील, पापनाशके सूर्यदेव के दोनों दक्षिणायन और उत्तरायणरूप पक्ष हजारों दिन तक अनुशासित रहते हैं। वे सभी देवों को अपने में समाहित करके सभी लोको के प्राणियों को देखते हुए जाते हैं ॥१३,२.३८॥

रोहितः कालो अभवद्रोहितोऽग्रे प्रजापतिः ।
रोहितो यज्ञानां मुखं रोहितः स्वराभरत्॥१३,२.३९॥

सूर्यदेव ही काल गणना के निर्धारक हुए, आगे वे ही प्रजापालक बने और वे ही यज्ञीय सत्कर्मों में प्रमुख होकर प्रकाशरूप स्वर्गीय सुख प्रदान करते हैं ॥१३,२.३९॥

रोहितो लोको अभवद्रोहितोऽत्यतपद्दिवम् ।
रोहितो रश्मिभिर्भूमिं समुद्रमनु सं चरत्॥१३,२.४०॥

सूर्यदेव ही सब लोकों के निर्माता होकर धुलोक को प्रकाशित करने लगे। वही अपनी किरणों से भूमि और समुद्र में संचार करते हैं ॥१३,२.४०॥

सर्वा दिशः समचरद्रोहितोऽधिपतिर्दिवः ।
दिवं समुद्रमाद्भूमिं सर्वं भूतं वि रक्षति ॥१३,२.४१॥

द्युलोक स्वर्ग के स्वामी सूर्य सभी दिशाओं में संचार करके द्युलोक से समुद्र में विचरण करते हैं। वहीं सभी प्राणियों और पृथ्वी का संरक्षण करते हैं ॥१३,२.४१॥

आरोहन् छुक्रो बृहतीरतन्द्रो द्वे रूपे कृणुते रोचमानः ।
चित्रश्चिकित्वान् महिषो वातमाया यावतो लोकान् अभि यद्विभाति ॥१३,२.४२॥

ये आलस्य- प्रमाद से विरत बलशाली तेजस्वी सूर्यदेव, विस्तृत दिशाओं में आरूढ़ होकर अपने दो रूपों की रचना करते हैं । अद्भुत, ज्ञानसम्पन्न और सामर्थ्ययुक्त गतिशीलता को प्राप्त करते हैं तथा जितने भी लोक विद्यमान हैं, उन सभी को वे प्रकाशमान करते हैं ॥१३,२.४२॥

अभ्यन्यदेति पर्यन्यदस्यतेऽहोरात्राभ्यां महिषः कल्पमानः ।

सूर्यं वयं रजसि क्षियन्तं गातुविदं हवामहे नाधमानाः ॥१३,२.४३॥

दिन और रात्रि से महिमायुक्त होते हुए ये सूर्यदेव एक भाग से सामने आते हैं और दूसरे भाग से गति करते रहते हैं। हम अन्तरिक्षलोक में विराजमान सूर्यदेव की स्तुति करते हैं, भयाक्रान्त हम सभी को वे श्रेष्ठ मार्गदर्शन प्रदान करें ॥१३,२.४३॥

पृथिवीप्रो महिषो नाधमानस्य गातुरदब्धचक्षुः परि विश्वं बभूव ।
विश्वं संपश्यन्त्सुविदत्रो यजत्र इदं शृणोतु यदहं ब्रवीमि ॥१३,२.४४॥

पृथ्वी के पालनकर्ता, महिमायुक्त, दुःखी मनुष्य के पथप्रदर्शक, दृष्टियुक्त सूर्यदेव विश्व के चारों ओर संव्याप्त हैं । विश्व के द्रष्टा, कल्याणकारी, ज्ञानशक्ति से सम्पन्न और पूजन योग्य सूर्यदेव हमारा निवेदन सुनें ॥१३,२.४४॥

पर्यस्य महिमा पृथिवीं समुद्रं ज्योतिषा विभ्राजन् परि द्यामन्तरिक्षम् ।
सर्वं संपश्यन्त्सुविदत्रो यजत्र इदं शृणोतु यदहं ब्रवीमि ॥१३,२.४५॥

उनकी ख्याति सर्वत्र संव्याप्त है, ये अपनी आभा से पृथ्वी, समुद्र, द्युलोक और अन्तरिक्ष सब में विस्तृत हैं। सभी कर्मों के द्रा, मंगलमयी ज्ञानशक्ति से युक्त और पूजनीय सूर्यदेव हमारे निवेदन को ध्यानपूर्वक सुनें ॥१३,२.४५॥

अबोध्यग्निः समिधा जनानां प्रति धेनुमिवायतीमुषसम् ।
यह्वा इव प्र वयामुज्जिहानाः प्र भानवः सिस्रते नाकमछ
॥१३,२.४६॥

उष:काल के आगमन के समय जिस प्रकार गौओं को जगाया जाता है, उसी प्रकार मनुष्यों की समिधाओं से यज्ञाग्नि भी प्रदीप्त होती है । तब उस अग्नि की ऊपर उठने वाली विशाल ज्वालाएँ उसी प्रकार सीधी स्वर्गधाम जाती हैं, जिस प्रकार वृक्षों की शाखाएँ आकाश की ओर जाती हैं ॥१३,२.४६॥

॥अथर्ववेद – त्रयोदश काण्डम्॥

सूक्त ३ - अध्यात्म सूक्त

रोहित देव की स्तुति

य इमे द्यावापृथिवी जजान यो द्रापिं कृत्वा भुवनानि वस्ते ।
यस्मिन् क्षियन्ति प्रदिशः षडुर्वीर्याः पतङ्गो अनु विचाकशीति।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।

जिन्होंने इस द्युलोक और पृथ्वी को प्रकट किया, जो सम्पूर्ण लोकों को आच्छादन बनाकर उनमें संव्याप्त हैं। जिनके अंदर छह दिशाएँ और उप दिशाएँ सूर्य से प्रकाशित होकर निवास करती हैं। इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उस (ब्रह्मघाती) को कम्पायमान करें, उसे क्षीण करें तथा बन्धन में डाल दें ॥१३,३.१॥

यस्माद्वाता ऋतुथा पवन्ते यस्मात्समुद्रा अधि विक्षरन्ति ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति।

उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ॥१३,३.२॥

जिस देव द्वारा वायुदेव ऋतुओं के अनुसार बहते हैं और जिससे समुद्र (जल प्रवाह) विविध ढंग से प्रवाहित होते हैं । इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को कम्पायमान करें, उसकी शक्ति को विनष्ट करें तथा उसे बंधनों में जकड़े ॥१३,३.२॥

यो मारयति प्राणयति यस्मात्प्राणन्ति भुवनानि विश्वा ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ॥१३,३.३॥

जिससे सभी मनुष्य प्राणशक्ति प्राप्त करते हैं, जिसकी क्षीणता से मृत्यु होती है तथा जिनकी सामर्थ्य से सभी प्राणी जीवन व्यापार (श्वास-प्रश्वास) चलाते हैं। इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन बनता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को भयभीत करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा उसे बंधनों में जकड़े ॥१३,३.३॥

यः प्राणेन द्यावापृथिवी तर्पयत्यपानेन समुद्रस्य जठरं यः पिपर्ति ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ॥१३,३.४॥

जो परमात्म सत्ता, प्राणशक्ति द्वारा द्युलोक और पृथ्वी को संतुष्ट करती और अपानशक्ति द्वारा समुद्र के उदर को भरती है । इस मर्म के ज्ञाता- विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (बह्महत्यारे) को भयभीत करें, उसकी शक्ति का क्षय करें तथा पाशों में जकड़े ॥१३,३.४॥

यस्मिन् विराट्परमेष्ठी प्रजापतिरग्निर्वैश्वानरः सह पङ्क्त्या श्रितः ।
यः परस्य प्राणं परमस्य तेज आददे ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.५॥

जिसमें विराट् परब्रह्म प्रजापति अग्नि और वैश्वानर पंक्ति के साथ आश्रित हैं, जिसने उत्तम प्राण और परम तेजस्विता को ग्रहण किया है। इस मर्म के ज्ञाता- विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव(परमेश्वर) के क्रोध का

भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्महत्यारे) को भयभीत करें, उसकी शक्ति का ह्रास करें तथा पाशों से जकड़ डालें ॥१३,३.५॥

यस्मिन् षडुर्वीः पञ्च दिशो अधिश्रिताश्चतस्र आपो यज्ञस्य त्रयोऽक्षराः ।
यो अन्तरा रोदसी क्रुद्धश्चक्षुषैक्षत ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.६॥

जिसमें छह उर्वियाँ तथा पाँच विस्तृत दिशाएँ, चार प्रकार के जल और यज्ञ के तीन अक्षर आश्रित हैं, जो अन्तर (अन्तःकरण) से उग्र होकर द्युलोक और भूलोक को देखते हैं। इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को कँपाएँ, उसकी शक्ति का ह्रास करें तथा पाशों में जकड़े ॥१३,३.६॥

यो अन्नादो अन्नपतिर्बभूव ब्रह्मणस्पतिरुत यः ।
भूतो भविष्यद्भुवनस्य यस्पतिः ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.७॥

जो अन्न के संरक्षक, अन्नभक्षक और ब्रह्मणस्पति (ज्ञान के अधिपति) हैं, जो भूत और भविष्यत् जगत् के स्वामी हैं । इस मर्म के ज्ञाता -विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को भयभीत करें, उसकी सामर्थ्य का क्षय करें तथा बन्धनों में बाँधे ॥१३,३.७॥

अहोरात्रैर्विमितं त्रिंशदङ्गं त्रयोदशं मासं यो निर्मिमीते ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ॥१३,३.८॥

जिन्होंने दिन और रात्रि के तीस अंगों का एक महीना बनाया और जो वर्ष के तेरहवें (अधिक मास) का नैर्माण करते हैं। इस मर्म के ज्ञाता- विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता हैं, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उसे कम्पायमान करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा पाशों से जकड़े ॥१३,३.८॥

कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा अपो वसाना दिवमुत्पतन्ति ।
त आववृत्रन्त्सदनादृतस्य ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.९॥

सूर्यदेव की श्रेष्ठ किरणें पृथ्वी से जल लेकर आकाश में जाती हैं, फिर वे किरणें जल के स्थान (मेघमण्डल से बार-बार लौटती हैं। इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव के क्रोध का भाजन होता है । है सूर्यदेव ! आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी क्षमता का ह्रास करें तथा उसे बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.९॥

यत्ते चन्द्रं कश्यप रोचनावद्यत्संहितं पुष्कलं चित्रभानु यस्मिन्त्सूर्या आर्पिताः सप्त साकम् ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ॥१३,३.१०॥

हे कश्यप ! आपके द्वारा संगृहीत आनन्ददायक, प्रकाशमान और अति विलक्षण तेजस् में सात सूर्य साथ-साथ रहते हैं। इस मर्म के ज्ञाता – विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को प्रकम्पित करें, उसे क्षीण करें तथा पाशों में बाँधे ॥ ॥१३,३.१०॥

बृहदेनमनु वस्ते पुरस्ताद्रथंतरं प्रति गृह्णाति पश्चात्।

ज्योतिर्वसाने सदमप्रमादम् ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.११॥

बृहद्गान इसके समक्ष स्थित होते हैं और रथन्तरगान पृष्ठभाग से इसे ग्रहण करते हैं। ये दोनों प्रमाद त्यागकर सदैव ज्योतियों से आच्छादित रहते हैं । इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य क्षीण करें तथा पाशों में जकड़ डालें ॥१३,३.११॥

बृहदन्यतः पक्ष आसीद्रथंतरमन्यतः सबले सध्रीची ।
यद्रोहितमजनयन्त देवाः ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१२॥

जब देवशक्तियों ने सूर्यदेव को प्रकट किया, तो बृहद्गान का एक पक्ष और रथन्तर गान का दूसरा पक्ष बना। ये दोनों बलशाली और साथ-साथ रहने वाले पक्ष हैं । इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप

ऐसे (ब्रह्मघाती) को प्रकम्पित करें, उसे सामर्थ्यहीन करें तथा बन्धनों में जकड़ डालें ॥१३,३.१२॥

स वरुणः सायमग्निर्भवति स मित्रो भवति प्रातरुद्यन् ।
स सविता भूत्वान्तरिक्षेण याति स इन्द्रो भूत्वा तपति मध्यतो दिवम् ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१३॥

वही (पापनाशक) वरुणदेव सायंकाल के समय अग्नि होते हैं और प्रभात वेला में उदित होते हुए मित्र सूर्य होते हैं। वे अन्तरिक्ष के मध्य में सविता बनकर तथा शुलोक के मध्य इन्द्र होकर तपते हैं। इस मर्म के ज्ञाता – विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे (ब्रह्मघाती) को प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य का ह्रास करें तथा बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.१३॥

सहस्राह्ण्यं वियतावस्य पक्षौ हरेर्हंसस्य पततः स्वर्गम् ।
स देवान्त्सर्वान् उरस्युपदद्य संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१४॥

स्वर्ग स्थान को गमन करते हुए गतिशील, पापनाशक सूर्यदेव के दोनों पक्ष हजारों दिन तक नियमित रूप से क्रियाशील रहते हैं। सभी देवों को अपने में धारण करके ये सभी प्राणियों को देखते हुए जाते हैं। इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव !आप ऐसे (बह्मघाती) को प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा उसे बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.१४॥

अयं स देवो अप्स्वन्तः सहस्रमूलः परुशाको अत्रिः ।
य इदं विश्वं भुवनं जजान ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१५॥

जिसने इस सम्पूर्ण जगत् की रचना की, वे देव वही (सूर्य) हैं, जिसके हजारों मूल और शाखाएँ हैं, जो तीनों प्रकार के दुखों से रहित हैं और जल के भीतर विराजमान हैं। इस मर्म के ज्ञाता- विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा उसे बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.१५॥

शुक्रं वहन्ति हरयो रघुष्यदो देवं दिवि वर्चसा भ्राजमानम् ।

यस्योर्ध्वा दिवं तन्वस्तपन्त्यर्वाङ्सुवर्णैः पटरैर्वि भाति ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१६॥

अपने वर्चस् (प्रभाव से देदीप्यमान देव को द्रुतगति वाले अश्व (किरण समूह) द्युलोक में धारण करते हैं। उनके शरीर के ऊपरी भाग की किरणें दिव्यलोक को तपाती हैं तथा श्रेष्ठ वर्णयुक्त किरणें इस ओर (नीचे) पृथ्वी पर प्रकाशित होती हैं। इस मर्म के ज्ञाता-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी शक्ति का ह्रास करें तथा उसे बन्धनों से प्रताड़ित करें ॥१३,३.१६॥

येनादित्यान् हरितः सम्वहन्ति येन यज्ञेन बहवो यन्ति प्रजानन्तः ।
यदेकं ज्योतिर्बहुधा विभाति ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१७॥

जिस देव की सामर्थ्य से सूर्य के किरणरूप अश्व उन्हें वहन करते हैं, जिनकी महिमा से विद्वान् मनुष्य यज्ञ क्रिया को सम्पन्न करते हैं तथा जो एक तेज से सम्पन्न होकर भी अनेक प्रकार से प्रकाशित होते हैं । इस मर्म के ज्ञाता

विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । है सूर्यदेव !आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा उसे पाशों में जकड़े ॥१३,३.१७॥

सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा ।
त्रिनाभि चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुः ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.१८॥

एक चक्रवाले सूर्यरथ को सात शक्तियाँ जोतती हैं। सात नाम वाला एक ही अश्व इसे खींचता है । उसका तीन नाभियों (ऋतुओं या लोकों) वाला चक्र जरारहित और नाशरहित है । इसी (कालचक्र) में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अवस्थित है। इस मर्म के ज्ञाता विद्वान् बह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा उसे बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.१८॥

अष्टधा युक्तो वहति वह्निरुग्रः पिता देवानां जनिता मतीनाम् ।
ऋतस्य तन्तुं मनसा मिमानः सर्वा दिशः पवते मातरिश्वा ।

तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति । ॥१३,३.१९॥

जो अग्निदेव देवशक्तियों के पालनकर्ता और विचारों के उत्पादक हैं, वे उग्र होकर आठ प्रकार से चलते हैं। वायुदेव यज्ञ के ताने-बाने को मन की गति से मापते हुए सम्पूर्ण दिशाओं को शुद्ध करते हैं। इस मर्म के ज्ञाता विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव !आप ऐसे ब्रह्मघाती को भयभीत करें, उसकी शक्ति का क्षय करें तथा उसे पाशों में जकड़े ॥१३,३.१९॥

संयञ्चं तन्तुं प्रदिशोऽनु सर्वा अन्तर्गायत्र्याममृतस्य गर्भे ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान् ॥१३,३.२०॥

यज्ञ की भावना का यह सूत्र सभी दिशाओं में विस्तारित हो रहा है, यह गायत्रीरूपी अमृत के भीतर स्थित है । इस मर्म के ज्ञाता विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप ऐसे ब्रह्मघाती को प्रकम्पित करें, उसकी शक्ति का ह्रास करें तथा उसे पाशों से बाँधे ॥१३,३.२०॥

निम्रुचस्तिस्रो व्युषो ह तिस्रस्त्रीणि रजांसि दिवो अङ्ग तिस्रः ।
विद्मा ते अग्ने त्रेधा जनित्रं त्रेधा देवानां जनिमानि विद्म ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.२१॥

है अग्निदेव ! हम आपके तीन प्रकार के जन्मों से अवगत हैं, देवशक्तियों के तीन जन्मों के विषय में भी हम जानते हैं । तीन अस्त और तीन उषः काल हैं । अन्तरिक्ष और द्युलोक के भी तीन भेद हैं। इस मर्म के ज्ञात-विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा पाशों में जकड़े ॥१३,३.२१॥

वि य और्णोत्पृथिवीं जायमान आ समुद्रमदधातन्तरिक्षे ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
उद्वेपय रोहित प्र क्षिणीहि ब्रह्मज्यस्य प्रति मुञ्च पाशान्
॥१३,३.२२॥

जो देव प्रादुर्भूत होकर पृथ्वी को आच्छादित करते हैं और अन्तरिक्ष में समुद्री जल को धारण करते हैं। इस मर्म के ज्ञाता- विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव के क्रोध का भाजन होता है । हे सवितादेव !आप ऐसे ब्रह्मघाती को प्रकम्पित करें, उसकी सामर्थ्य को निस्तेज करें तथा उसे बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.२२॥

त्वमग्ने क्रतुभिः केतुभिर्हितोऽर्कः समिद्ध उदरोचथा दिवि ।
किमभ्यार्चन् मरुतः पृश्निमातरो यद्रोहितमजनयन्त देवाः ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.२३॥

हे अग्निदेव ! आप ज्ञानयज्ञों में प्रतिष्ठित किये जाते हैं, अच्छी प्रकार प्रज्वलित होकर द्युलोक में प्रकाशित होते हैं। जिस समय देवताओं ने सूर्यदेव को प्रकट किया, उस समय क्या भूमि को मातृवत् स्वीकार करने वाले मरुद्गणों ने आपका पूजन वन्दनं किया था? इस मर्म के ज्ञाता – विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भजन होता है । हे रोहितदेव ! आप उस ब्रह्मघाती को कम्पायमान करें, उसकी सामर्थ्य को क्षीण करें तथा बन्धनों में जकड़े ॥१३,३.२३॥

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।

योऽस्येशे द्विपदो यश्चतुष्पदः ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.२४॥

जो आत्मिकशक्ति के और शारीरिक सामर्थ्य के प्रदाता तथा सभी देवों के उपास्य हैं। जो दो पैर वाले (मनुष्य आदि) और चार पैर वाले (गौ- अश्वादि) प्राणियों के स्वामी हैं। इस मर्म के ज्ञाता- विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव (परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । हे सूर्यदेव ! आप उसे प्रकम्पित करें, उसकी शक्ति को क्षीण करें तथा ब्रह्महत्या के अपराध स्वरूप पाशों में जकड़े ॥१३,३.२४॥

एकपाद्द्विपदो भूयो वि चक्रमे द्विपात्त्रिपादमभ्येति पश्चात्।
चतुष्पाच्चक्रे द्विपदामभिस्वरे संपश्यन् पङ्क्तिमुपतिष्ठमानः ।
तस्य देवस्य क्रुद्धस्यैतदागो य एवं विद्वांसं ब्राह्मणं जिनाति ।
॥१३,३.२५॥

ये देव एक पाद होकर द्विपादों से अधिक चलते हैं, फिर द्विपाद, त्रिपादों के साथ सम्मिलित होते हैं। द्विपाद निश्चित ही घट्पादों से भी अधिक चलते हैं। वे सभी एक पद (ब्रह्मा के शरीर का आश्रय ग्रहण करते हैं। इस मर्म के ज्ञाता – विद्वान् ब्रह्मनिष्ठ को जो पीड़ित करता है, वह उस देव

(परमेश्वर) के क्रोध का भाजन होता है । है सूर्यदेव ! आप ऐसे ब्रह्मघाती को प्रकम्पित करें, क्षीण करें तथा बन्धन में जकड़े ॥१३,३.२५॥

कृष्णायः पुत्रो अर्जुनो रात्र्या वत्सोऽजायत ।
स ह द्यामधि रोहति रुहो रुरोह रोहितः ॥१३,३.२६॥

कृष्णवर्ण वालीं रात्रि का पुत्र सूर्य उदित हुआ, वह उदित होते हुए द्युलोक पर चढ़ता है । वह रोहित (सूर्य) रोहणशील वस्तुओं के ऊपर आरोहण करता है ॥१३,३.२६॥

॥अथर्ववेद – त्रयोदश काण्डम्॥

सूक्त ४ – अध्यात्म सूक्त

सूर्य की स्तुति, ब्रह्म के ज्ञाता का वर्णन, इंद्र की स्तुति तथा ब्रह्म वर्चस प्रदान करने की कामना

स एति सविता स्वर्दिवस्पृष्ठेऽवचाकशत्॥१३,४.१॥

ये सूर्यदेव द्युलोक के पृष्ठ भाग में प्रकाशित होते हुए आगमन करते हैं ॥१३,४.१॥

रश्मिभिर्नभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृतः ॥१३,४.२॥

इन्होंने अपनी किरणों से आकाश को परिपूर्ण किया। ये महान् इन्द्र (सूर्य) देव तेजस्विता से युक्त होकर चलते हैं ॥१३,४.२॥

स धाता स विधर्ता स वायुर्नभ उच्छ्रितम् ॥१३,४.३॥

वही धाता, विधाता और वायुदेव हैं, जिनने ऊँचे आकाश को बनाया है, जो अपनी किरणों से आकाश को व्याप्त करके इन्द्ररूप में गतिमान् हैं ॥१३,४.३॥

सोऽर्यमा स वरुणः स रुद्रः स महादेवः ॥१३,४.४॥

वही अर्यमा, वरुण, रुद्र और महादेव हैं, जो अपनी किरणों से आकाश को व्याप्त करके इन्द्ररूप में गतिमान् हैं ॥१३,४.४॥

सो अग्निः स उ सूर्यः स उ एव महायमः ॥१३,४.५॥

वही अग्निदेव, सूर्य और महायम हैं, जो अपनी किरणों से आकाश को व्याप्त करके इन्द्ररूप में गतिमान् हैं ॥१३,४.५॥

तं वत्सा उप तिष्ठन्त्येकशीर्षाणो युता दश ॥१३,४.६॥

उनके साथ एक मस्तक वाले दस वत्स संयुक्त होकर रहते हैं, जो अपनी किरणों से आकाश को व्याप्त करके इन्द्ररूप में गतिमान् हैं ॥१३,४.६॥

पश्चात्प्राञ्च आ तन्वन्ति यदुदेति वि भासति ॥१३,४.७॥

वे उदित होते ही प्रकाशित होते हैं तथा बाद में (पीछे से उनकी पूजन योग्य किरणें उन्हें चारों ओर से घेर लेती हैं, जो अपनी किरणों से आकाश को व्याप्त करके इन्द्ररूप में गतिमान् हैं ॥१३,४.७॥

तस्यैष मारुतो गणः स एति शिक्याकृतः ॥१३,४.८॥

उनके साथ ये मरुद्गण (एक ही) छींके में रखे हुए के समान चलते हैं ॥१३,४.८॥

रश्मिभिर्नभ आभृतं महेन्द्र एत्यावृतः ॥१३,४.९॥

इन सूर्यदेव ने अपनी किरणों से आकाश को संव्याप्त किया है, ये महान् इन्द्र तेजस्वी किरणों से आवृत होकर चलते हैं ॥१३,४.९॥

तस्येमे नव कोशा विष्टम्भा नवधा हिताः ॥१३,४.१०॥

उनके ये नौ कोश विभिन्नरूपों में स्थित नौ प्रकार हैं ॥१३,४.१०॥

स प्रजाभ्यो वि पश्यति यच्च प्राणति यच्च न ॥१३,४.११॥

वे (सूर्यदेव स्थावर, जंगम सभी प्रजाजनों के द्रष्टा और सबके प्राणस्वरूप हैं ॥१३,४.११॥

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव ॥१३,४.१२॥

वे एकत्र हुई शक्ति हैं। वे अद्वितीय एक मात्र व्यापक देव केवल एक ही हैं ॥१३,४.१२॥

एते अस्मिन् देवा एकवृतो भवन्ति ॥१३,४.१३॥

ये सभी देवगण इसमें एकरूप होते हैं ॥१३,४.१३॥

कीर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च ॥१३,४.१४॥

य एतं देवमेकवृतं वेद ॥१३,४.१५॥

जो इन देव को मात्र एक ही समझता है, उसे कीर्ति, यश, जल, आकाश, ब्रह्मवर्चस (परमात्म तेज) अन्न और उपभोग्य सामग्री प्राप्त होती है ॥१३,४.१४-१३,४.१५॥

न द्वितीयो न तृतीयश्चतुर्थो नाप्युच्यते ॥१३,४.१६॥

न पञ्चमो न षष्ठः सप्तमो नाप्युच्यते ॥१३,४.१७॥

नाष्टमो न नवमो दशमो नाप्युच्यते ॥१३,४.१८॥

जो इन एक मात्र व्यापक देव के ज्ञाता हैं, वे दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, छठे, सातवें, आठवें, नवें और दसवें ऐसे नहीं कहे जाते ॥१३,४.१६-१३,४.१८॥

स सर्वस्मै वि पश्यति यच्च प्राणति यच्च न ॥१३,४.१९॥

जो इन एक वरेण्य देव के ज्ञाता हैं, वे जड़ और चेतन सबको देखते हैं और प्राणवान् हैं ॥१३,४.१९॥

तमिदं निगतं सहः स एष एक एकवृदेक एव ॥१३,४.२०॥

वह एकत्र हुई सामर्थ्य है । वह अद्वितीय वरेण्य देव केवल मात्र एक है ॥१३,४.२०॥

सर्वे अस्मिन् देवा एकवृतो भवन्ति ॥१३,४.२१॥

इसमें ये सम्पूर्ण देवगण एक रूप होते हैं, जो एक अद्वितीय वरेण्य देव को जानते हैं ॥१३,४.२१॥

ब्रह्म च तपश्च कीर्तिश्च यशश्चाम्भश्च नभश्च ब्राह्मणवर्चसं चान्नं चान्नाद्यं च ॥१३,४.२२॥

ब्रह्मज्ञान, तप:शक्ति, कीर्ति, यश, जल, आकाश, ब्रह्मवर्चस, अन्न और उपभोग्य सामग्री उन्हें ही उपलब्ध होती है, जो इन एकमात्र वरेण्य देव के ज्ञाता हैं ॥१३,४.२२॥

भूतं च भव्यं च श्रद्धा च रुचिश्च स्वर्गश्च स्वधा च ॥१३,४.२३॥

भूत, भविष्यत् , श्रद्धा, तेजस्विता, कान्ति, स्वर्ग और स्वधा उन्हें ही प्राप्त होते हैं, जो एकमात्र वरेण्य देव के ज्ञाता हैं ॥१३,४.२३॥

य एतं देवमेकवृतं वेद ॥१३,४.२४॥

जो इन एकमात्र वरेण देव के ज्ञाता हैं, उन्हें ही उपर्युक्त सामर्थ्य उपलब्ध होती है ॥१३,४.२४॥

स एव मृत्युः सोऽमृतं सोऽभ्वं स रक्षः ॥१३,४.२५॥

वही मृत्यु, अमृत, महान् और संरक्षक अथवा राक्षस हैं ॥१३,४.२५॥

स रुद्रो वसुवनिर्वसुदेये नमोवाके वषट्कारोऽनु संहितः ॥१३,४.२६॥

वही रुद्रदेव, धनदान के समय धन – प्राप्तकर्ता, नमस्कार यज्ञ में श्रेष्ठ विधि से उच्चरित वषट्कार हैं ॥१३,४.२६॥

तस्येमे सर्वे यातव उप प्रशिषमासते ॥१३,४.२७॥

सभी यातनादायी शक्तियाँ उनके निर्देशन में ही चलती हैं ॥१३,४.२७॥

तस्यामू सर्वा नक्षत्रा वशे चन्द्रमसा सह ॥१३,४.२८॥

उनके ही वश में चन्द्रमा के साथ ये सभी नक्षत्र रहते हैं ॥१३,४.२८॥

स वा अह्नोऽजायत तस्मादहरजायत ॥१३,४.२९॥

वे दिन से प्रकट हुए और दिन उनसे उत्पन्न हुए ॥१३,४.२९॥

स वै रात्र्या अजायत तस्माद्रात्रिरजायत ॥१३,४.३०॥

वे रात्रि से प्रकट हुए और रात्रि उनसे उत्पन्न हुई ॥१३,४.३०॥

स वा अन्तरिक्षादजायत तस्मादन्तरिक्षमजायत ॥१३,४.३१॥

वे अन्तरिक्ष से प्रकट हुए और अन्तरिक्ष उनसे प्रकट हुआ ॥१३,४.३१॥

स वै वायोरजायत तस्माद्वायुरजायत ॥१३,४.३२॥

वे वायुदेव से उत्पन्न हुए और वायुदेव उनसे प्रकट हुए ॥१३,४.३२॥

स वै दिवोऽजायत तस्माद्द्यौरधि अजायत ॥१३,४.३३॥

वे द्युलोक से प्रकट हुए और द्युलोक उनसे उत्पन्न हुआ ॥१३,४.३३॥

स वै दिग्भ्योऽजायत तस्माद्दिशोऽजायन्त ॥१३,४.३४॥

वे दिशाओं से उत्पन्न हुए और दिशाएँ उनसे उत्पन्न हुईं ॥१३,४.३४॥

स वै भूमेरजायत तस्माद्भूमिरजायत ॥१३,४.३५॥

वे पृथ्वी से प्रकट हुए और भूमि उनसे उत्पन्न हुई ॥१३,४.३५॥

स वा अग्नेरजायत तस्मादग्निरजायत ॥१३,४.३६॥

वे अग्निदेव से उत्पन्न हुए और अग्निदेव उनसे प्रकट हुए ॥१३,४.३६॥

स वा अद्भ्योऽजायत तस्मादापोऽजायन्त ॥१३,४.३७॥

जल से उत्पन्न हुए और जल उनसे प्रकट हुआ ॥१३,४.३७॥

स वा ऋग्भ्योऽजायत तस्मादृचोऽजायन्त ॥१३,४.३८॥

वे ऋचाओं से प्रकट हुए और ऋचाएँ उनसे उत्पन्न हुईं ॥१३,४.३८॥

स वै यज्ञादजायत तस्माद्यज्ञोऽजायत ॥१३,४.३९॥

वे यज्ञदेव से उत्पन्न हुए और यज्ञदेव उनसे प्रकट हुए ॥१३,४.३९॥

स यज्ञस्तस्य यज्ञः स यज्ञस्य शिरस्कृतम् ॥१३,४.४०॥

वे यज्ञ हैं, यज्ञ उन्हीं का है और वे यज्ञ के शीर्षरूप हैं ॥१३,४.४०॥

स स्तनयति स वि द्योतते स उ अश्मानमस्यति ॥१३,४.४१॥

वही गर्जन करते हैं, दीप्तिमान् होते हैं तथा ओलों को गिराते हैं ॥१३,४.४१॥

पापाय वा भद्राय वा पुरुषायासुराय वा ॥१३,४.४२॥

यद्वा कृणोष्योषधीर्यद्वा वर्षसि भद्रया यद्वा जन्यमवीवृधः ॥१३,४.४३॥

आप पापकर्मियों, हितकारक पुरुषों अथवा आसुरी वृत्तियों से युक्त मनुष्यों (राक्षसों) और ओषधियों का निर्माण करते हैं, कल्याणकारी वृष्टिरूप में बरसते हैं अथवा उत्पन्न हुए लोगों को उच्चस्तरीय कल्याणमयी दृष्टिसे प्रवृद्ध करते हैं ॥१३,४.४२-१३,४.४३॥

तावांस्ते मघवन् महिमोपो ते तन्वः शतम् ॥१३,४.४४॥

हे मघवन् (ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव) ! ऐसी आपकी महिमा है, ये सभी सैकड़ों शरीर आपके ही हैं ॥१३,४.४४॥

उपो ते बध्वे बद्धानि यदि वासि न्यर्बुदम् ॥१३,४.४५॥

आप अपने समीपस्थ सैकड़ों बँधे हुए लोगों को पार करने वाले तथा असीमित हैं ॥१३,४.४५॥

भूयान् इन्द्रो नमुराद्भूयान् इन्द्रासि मृत्युभ्यः ॥१३,४.४६॥

इन्द्र अमरता से भी विशाल हैं(श्रेष्ठ हैं)। हे इन्द्रदेव ! आप मृत्यु के मूलभूत कारणों से भी श्रेष्ठतम हैं ॥१३,४.४६॥

भूयान् अरात्याः शच्याः पतिस्त्वमिन्द्रासि विभूः प्रभूरिति त्वोपास्महे वयम् ॥१३,४.४७॥

हे शक्ति के अधिपति इन्द्रदेव ! आप दुष्ट शत्रुओं से श्रेष्ठ । आप सर्वव्यापक परमेश्वररूप हैं, ऐसा जानते हुए हम आपकी उपासना करते हैं ॥१३,४.४७॥

नमस्ते अस्तु पश्यत पश्य मा पश्यत ॥१३,४.४८॥

हे दर्शन योग्य ! आपके लिए नमन है, हे शोभन तेजस्विन् ! आप हमारी ओर दृष्टिपात करें ॥१३,४.४८॥

अन्नाद्येन यशसा तेजसा ब्राह्मणवर्चसेन ॥१३,४.४९॥

आप हमें अन्न, यश, तेज और ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न करें ॥१३,४.४९॥

अम्भो अमो महः सह इति त्वोपास्महे वयम् ॥१३,४.५०॥

जल, पौरुष, महत्ता और सामर्थ्यवान् इन स्वरूपों में हम आपकी उपासना करते है । आप हमें अन्न, यश, तेज और ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न बनाएँ ॥१३,४.५०॥

अम्भो अरुणं रजतं रजः सह इति त्वोपास्महे वयम् ॥१३,४.५१॥

जल, अरुण (लाल वर्ण), श्वेत और क्रियाशक्ति रूपों में हम आपकी उपासना करते हैं। आप हमें अन्न, यश, तेज और ब्रह्मबर्चस से सम्पन्न बनाएँ ॥१३,४.५१॥

उरुः पृथुः सुभूर्भुव इति त्वोपास्महे वयम् ॥१३,४.५२॥

महानतायुक्त, विस्तृत, श्रेष्ठ प्राणस्वरूप, तथा दुःखरहित आपके गुणों की हम उपासना करते हैं आप हमें अन्न, यश, तेज और ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न बनाएँ ॥१३,४.५२॥

प्रथो वरो व्यचो लोक इति त्वोपास्महे वयम् ॥१३,४.५३॥

विस्तृत, श्रेष्ठ, व्यापक और लोकों में संव्याप्त आपके गुणों की हम उपासना करते हैं, आप हमें अन्न, यश, तेज़ और ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न बनाएँ ॥१३,४.५३॥

भवद्वसुरिदद्वसुः संयद्वसुरायद्वसुरिति त्वोपास्महे वयम् ॥१३,४.५४॥

ऐश्वर्य सम्पन्न, वैभवों से युक्त, सभी ऐश्वर्यों के संग्रहकर्ता, सभी सम्पदाओं के भण्डार, ऐसा मानकर हम आपकी उपासना करते हैं, आप हमें अन्न, यश, तेज और ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न बनाएँ ॥१३,४.५४॥

नमस्ते अस्तु पश्यत पश्य मा पश्यत ॥१३,४.५५॥

हे दर्शनीय ! आपके लिए हमारा वन्दन है, हे शोभन तेजस्विन् ! आप हमारी ओर दृष्टिपात करें ॥१३,४.५५॥

अन्नाद्येन यशसा तेजसा ब्राह्मणवर्चसेन ॥१३,४.५६॥

आप हमें खाद्य सामग्री, यशस्विता, तेजस्विता और ब्रह्मवर्चस से सम्पन्न बनाएँ ॥१३,४.५६॥

॥इति त्रयोदश काण्डम्॥